शंकर मत में ब्रह्म कैसा है - शंकर के दर्शन का मूल मंत्र है एकम ब्रह्मा द्वितीय नास्ति केवल एक ही सत्ता है अर्थात ब्रह्मा। इससे इतर कोई दूसरी सत्ता है ही नहीं। ब्रह्मा का निरूपण उपनिषदों के शब्दों में यह है सत्यम ज्ञान अंतम ब्रह्मा। ब्रह्म सत्य है, ज्ञान और अनन्त है, ब्रह्म को वाणी से वर्णन नहीं कर सकते। ब्रह्मा गुण और गुनी के द्वंदों से रहित है।अर्थात ब्रह्म में किसी गुण का समावेश नहीं। वह न बुरा है, न भला है, न काला है, न पीला ब्रह्मा करता और क्रिया के द्वंदों से भी मुक्त है अर्थात व कुछ करता नहीं है ।ब्रह्मा ज्ञाता और ज्ञान की द्वंदों से भी परे अर्थात यह नहीं कह सकते कि ब्रह्मा अमुख वस्तु को जानता है, केवल ज्ञान है ज्ञाता नहीं।

ब्रह्मा अकर्ता क्यों है? ब्रह्मा ज्ञाता क्यों नहीं? ब्रह्म में कोई गुण क्यों नहीं, जब इन सब प्रश्नों पर आप विचार कीजिए तब आपको लगेगा कि शंकर के सोचने का स्तर क्या था?

अतः शंकर स्वामी का मत है कि ब्रह्म एकमात्र सत्ता है। उसको वैशेषिक के द्रव्य गुण कर्म आदि छह पदार्थ की कोटी में नहीं ला सकते। तो क्या ब्रह्म के सिवा कोई और भी सत्ता है? शंकर कहते हैं, कदापि नहीं उपनिषद कहते हैं, नेह नानास्ति किंचन यहाँ कुछ भी बहुतायत नहीं है, जो कुछ है वह सब ब्रह्म ही है सब एक ही है।

1. **फिर इस पर सामान्य सी बात हैं। प्रश्न किया जाता है कि ये जो हमको जगत दिख रहा है, जीव जंतु प्राणी स्थावर दिख रहे हैं, ये कैसे दिख रहा है? यदि जगत कल्पित और मिथ्या है तो यदि केवल एक ही ब्रह्म की सत्ता है तो?**

उतर- शंकर उत्तर देते हैं कि ये सब माया हैं।अविद्या के कारन हमको ये सब विविध वस्तुएँ दिखती है। ये कोई आवश्यक नहीं है कि जो वस्तु हमको दिखे वो वास्तव में हो ही। यह कोई नियम नहीं हैं। कि जो वस्तु हमको दिख रही है उसकी वास्तविक सत्ता है। और इस पर बहुधा एक उदाहरण भी दिया जाता है। जैसे हम पृथ्वी पर रहकर ये देखते हैं कि सूर्य पूर्व से निकलता है और पश्चिम में जा करके डूबता है। तो यहाँ से ये हमको सत्य लगता है। लेकिन जब हम पृथ्वी से बाहर अंतरिक्ष से उसी सूर्य को देखेंगे तो सूर्य एक ही जगह पर स्थिर है अपितु पृथ्वी उनके चारों तरफ घूम रही तो जब हम पृथ्वी पर थे तब हमको ये भ्रांति हो रही थी। की भाई सूर्य घूमता है, लेकिन जब हम पृथ्वी से बाहर गए तब हमको यह सत्य का ज्ञान हुआ कि सूर्य घूमता नहीं, अपितु पृथ्वी ही घूमती। ऐसे ही ये जगत है। क्योंकि अभी हम इस जगत में है तो हम को ऐसा लग रहा है कि जगत सत्य है परन्तु जैसे ये हम ये

जान लेंगे। ये सब अविद्या है हमको माया के कारण दिख रही है। ये कोई वस्तु नहीं, सबका कारण तो ब्रह्म ही है जब ये अविद्या नष्ट हो जाएगी। जब हम अपने वास्तविक स्वरूप को जान जाएंगे तब ये सब नाना भेद समाप्त हो जाएंगे।

जगत मिथ्या है। इसके पक्ष में एक और उदाहरण हमको देखने को मिलता है। जैसे एक लकड़ी है, उसको हम पानी में डालते है तो हमको टेढ़ा लगता है। क्योंकि हमको प्रत्यक्ष वो टेढ़ा लग रहा है, इससे हम यह निश्चय नहीं कर सकते की लकड़ी टेढ़ी है क्योंकि जब हम उसको पानी से वापस बाहर निकालते हैं तब हम को ये ज्ञान हो जाता है कि लकड़ी तो सीधी है। जब लकड़ी को हम पानी में डालते है तो प्रकाश के अपवर्तन के कारण वो हमको टेढ़ी दिखती। वास्तव में लकड़ी सीधी ही है वैसे ही यह जगत है। जब हम इस जगत में रहते हैं तो हम को ये सत्य ही लगता है लेकिन जो मनुष्य इस जगत में रहते ही।ये जान जाता है कि ये सब तो माया ही है।को अपने वास्तविक स्वरूप को जान पाता है की सब ब्राह्मी है, ब्रह्मा के सिवा कोई दूसरी वस्तु नहीं है।जो व्यक्ति।जगत के विविध।वस्तु को देख उसको सत्य मानता है, वो अविद्या में फंसा रहता है।

शंकर कहते हैं कि इस संसार को वास्तविक केवल इसलिए नहीं माना जा सकता है क्योंकि ये दिखता है।क्योंकि हमको संसार में ऐसा बहुत बार देखने में आता है की दिखी हुई चीज़ भी वास्तविक नहीं होती, जैसा कि पूर्व के उदाहरण से समझा गया। ये सब हम केवल व्यवहार दशा में करते हैं। परमार्थ में तो ये सब व्यावहारिक कुछ है ही नहीं। सब कल्पित है। इसके लिए मुख्यतः दो तीन उदाहरण दिए जाते हैं। अर्थात्ः ब्रह्म ही सत्य है, जगत मिथ्या है एकत्ववाद सिद्ध करने के लिए ये दो तीन उदाहरण दिए जाते हैं, जैसे अंधेरे में लोग रस्सी को सांप समझकर डर जाते हैं। वास्तव में वो भ्रम होता है। रस्सी में हमको सांप का भ्रम होता है, वो सांप होता नहीं। फिर जब हम उसके पास जाकर के उस रस्सी का अवलोकन करते हैं तब हम को ये ज्ञान हो जाता है कि वास्तव में ये रस्सी नहीं है। दूर से देखने पर हमको ये भ्रम हुआ था, वैसे ही ये जगत है

दूसरा हमको स्वप्न का उदाहरण देखने को मिलता है, जैसे स्वप्न में हम् भिन्न भिन्न प्रकार के वस्तुओं को देखते हैं, परंतु जब हम नींद से जागते हैं तो ये भ्रम दूर हो जाता है, स्वप्न में तो वो सब हमको सत्य ही लगता है, ऐसे ही ये जगत है।

शंकर के मत में इस जगत को देखना जगत को सत्य मानना जगत के विभिन्न जीव, जंतु, स्थावर को सत्य मानना मनुष्यों को सत्य मानना ही बंधन है। सब कुछ ब्रह्म ही है। जब ऐसा ज्ञान हो जाए तब मुक्ति होती है। क्योंकि तब मैं ही मैं बच जाता है।

शंकर ज्ञान से मुक्ति मानते हैं, वैसे ऐसा सब मानते हैं परंतु वे केवल ज्ञान से ही मुक्ति मानते हैं। कहने का अर्थ है की उनकी द्रिष्टि में जिनको विद्या आ गई उनके लिए कर्म बंधन है, जो कर्म करता है वो संसार में फंसता है। और जीसको यह सब संसार मिथ्या है। केवल ब्रह्म ही सत्य है, यह ज्ञान हो गया, वो अब कर्म क्यों करेगा? तो शंकर के मत में धर्म, पूजा पाठ, सदाचार आदि क्या महत्त्व रखता है? कुछ भी नहीं।शं कर स्वामी के अनुसार धर्म, पूजा पाठ, साकार, उपासना, सदाचार इत्यादि तभी तक महत्वपूर्ण है। जब तक जीव अविद्या में फंसा हुआ है। जैसे ही उसको सत्य का ज्ञान होता है जैसे ही वो इन सब से छुट से छूट जाता है। जैसे ही वो जान जाता है कि मैं ब्रह्म हूँ, ये सब तो मिथ्या है। तब ये सब बहुतायत, नाना तत्व सब नष्ट हो जाते हैं और वो अपने आप को जान लेता है। फिर उसके लिए धर्म, पूजा पाठ, सदाचार आदि कुछ भी नहीं सब निरर्थक है|

संकर के मत में उपास्य उपासक भी अविद्या है। क्योंकि ये सब तो माया है जिसको हमने उपास्य देव समझ रखा है वो क्या है? केवल माया क्योंकि जब जीव यह जान लिया कि मेरे सिवा इस संसार में कुछ नहीं ।तो फिर उपास्य से उपासक का कोई भेद ही नहीं रहेगा। इसी प्रकार जीसको हम अपने से भिन्न अपना उपास्य देव या ईश्वर समझते हैं, वह तो माया या अविद्या के ही कारण है। जब ज्ञान हो गया और समझ में आ गया कि एक ही ब्रह्म है दूसरा कुछ भी नहीं तो फिर वह भी समझ में आ सकता है कि मैं ही ब्रह्म हूँ इससे इतर कुछ भी नहीं। फिर मैं किसकी उपासना करूँ? और मैं क्यों करूँ? मेरा इष्टदेव क्यों होगा? क्योंकि मैं स्वयं ही ब्रह्म हूँ। तो शंकर के मत में उपास्य से उपासक मूर्ति पूजा आदि भी अविद्या का कारण है। क्योंकि उसमें हम किसी दूसरे को ईश्वर मान उसकी पूजा करते हैं।

शंकर के मत में दानपुण्य सब अविद्या है। दानपुण्य अनुष्ठान यज्ञादि कारण ये सब अविद्या या माया के खिलौने है इनसे कोई वास्तविक परमार्थिक लाभ नहीं है। हाँ व्यवहार दशा में हमको संतोष अवश्य हो जाता है। वास्तविकता में लाभ तो नहीं है।लाभ तो केवल उसी ज्ञान से होता है जिससे इस संसार का भिन्नत्व भेद समाप्त हो जाए और हमें शुद्ध बुध मुक्त स्वभाव का अनुभव हो जाए। तो ये है शंकर

का दार्शनिक मत, इसको अद्वैतवाद कहते हैं। क्योंकि जितना द्वैत समझ में आ सकता है, उस सभी का यहाँ निषेध किया जाता है।

रामानुजाचार्य ने शंकराचार्य का बहुत खंडन किया रामानुजाचार्य विशिष्ट अद्वैत को मानते हैं संकर का मत अद्वैत रामानुज जी अपने आप को अद्वैतवादी ही कहते हैं, परंतु उसमें वह विशिष्ट शब्द को जोड़ते हैं। इसे यह ज्ञात होता है कि उस समय अद्वैतवाद का विरोध कितना कठिन था। क्योंकि रामानुजाचार्य को अपने सिद्धांत को रखने के लिए सिद्धांत में अद्वैत शब्द को रखना ही पड़ा। उन्होंने विशिष्ट रखा। इसमें ये भी प्रश्न हो सकता है कि जब अद्वैत में कुछ विशेष है तो द्वैत क्यों नहीं?

रामानुजाचार्य का मत है। कार्य में स्थित और कारण में स्थित स्थूल तथा सूक्ष्म चेतन तथा जड़ वस्तु ही जिसका शरीर है, उसे परम पुरुष कहते हैं। अर्थात ये जगत इसके कारण तथा जीव को उस परम पुरुष का ही प्रकार मानते हैं, उसका ही भाग मानते हैं। सूक्ष्म चेतन और जड़ जिसका शरीर है, ऐसा कारण ब्रह्म है।ब्र ह्मा तथा चेतन और जड़ का संघात ही जगत का उपादान है। इसीलिए उपादान होने पर भी ब्रह्म में विकार नहीं आता। अर्थात जो जगत में हमको जड़, चेतन, विविध वस्तुएँ दिखाई देती है, इन सब का उपादान ब्रह्मा, जीव और जगत का कारण है। ये तीनों में भेद करते हैं। ये शंकर की तरह जगत को काल्पनिक नहीं कहते। अपितु यह जगत परिणामवाद से बना है, विकार से बना है ऐसा मानते हैं। यह भेद इनके गीता भाष्य २.12 तथा 13.19 में देखा जा सकता है|

फिर आप कहेंगे ये तो शुद्ध रूप से द्वैत हैं, फिर विशिष्ट अद्वैत क्यों कहा? इसका कारण है कि प्रलय अवस्था में जीव जगत का कारण सुषुप्ति अवस्था में होता है। उस समय ब्रह्मा के अलावा किसी दूसरे पदार्थ की सत्ता है। इसका ज्ञान कैसे होगा? कौन कहेगा कि ब्रह्म के अलावा किसी अन्य वस्तु की सत्ता है? अतः विशिष्ट अद्वैत है। यह भेद हमें तब ज्ञात होता है जब ईश्वर इस जगत की रचना करता है। तब कारण जगत ता जिव व्यक्त रूप में आते है| तीनो की सत्ता तो नित्य ही रहती है|

शंकर जगत को असत् तथा ब्रह्मा को सत कहते हैं। ऐसा ही रामानुजाचार्य भी कहते हैं रामानुजाचार्य भी ब्रह्मा को सत तथा जगत को असतत कहते हैं। लेकिन यहाँ परिभाषा में भेद हैं। शंकराचार्य सत् अर्थात ब्रह्म नित्य को कहते हैं। शंकराचार्य के अनुसार सत वो है जो न हो पर प्रतीत हों। वो कल्पना को सत कहते हैं जैसेरे गिस्तान में जल दिखना, स्वप्न में हाथी। रामानुजाचार्य परिनाम्वाद को असत कहते विकार या बदलाब को असत कहते है जो वास्तविक होती है|